# प्र थ म अ ध्या य

## नायिका - स्वरूप, विकास एवं प्रकार

# प्र थ म अ ध्या य

## :: नायिका - स्वरूप विकास एवं प्रकार --

कहानी,उपन्यास, एकांकी, नाटक, प्रबन्ध काव्य आदि में यदि प्रमुख पात्र पुरुषा हैं तो वह ` नायक ` कहलाया जाता हैं अथवा यदि वह प्रमुख पात्र स्त्री है तो वह ` नायिका ` कहलायी जाती हैं ।

` शाकुन्तल ` का प्रमुख पात्र शकुन्तला हैं, अत: ` शाकुन्तल ` की नायिका शकुन्तला हैं । परन्तु उसमें दुष्यन्त भी एक प्रमुख पुरुषा पात्र हैं, अत: दुष्यन्त ` नायक ` हैं । तो क्या यह नाटक नायक-प्रधान हैं ? नहीं । क्यों ? क्योंकि कालिदास जी के ` शाकुन्तल ` इस नाटक की मुख्य कथावस्तु शकुन्तला के इर्द-गिर्द ही घूमती हैं, अत: यह नाटक नायिका-प्रधान हैं । इसमें प्रधान पात्र पुरुषा नहीं अपितु स्त्री हैं । अस्तु । फिर भी दुष्यन्त इस नाटक का नायक कहा जाता हैं । क्यों ? तो इसका उत्तर इस तरह देना उचित रहेगा कि नायिका प्रधान रचना की नायिका का पति अथवा प्रेमी ` नायक ` कहलाया जाता हैं, उसी प्रकार नायक-प्रधान रचना में नायक की पत्नी अथवा प्रिया ` नायिका ` कहलायी जाती हैं ।

नायिकाओं के स्वरूप की चर्चा प्राचीन संस्कृत साहित्य से आधुनिक हिन्दी साहित्य तक निरंतर चलती आयी हैं । अत: नायिकाओं के स्वरूप की

चर्चा दो स्वतंत्र विभागों में करना सुविधाजनक ठहरेगा ।

१) नायिकाओं का प्राचीन स्वरूप

और

२) नायिकाओं का अर्वाचीन ( आधुनिक ) स्वरूप ।

(१) नायिकाओं का प्राचीन स्वरूप --

स्त्री जाति में भावगोपन की प्रवृत्ति सविशेष मात्रा में होती है । जिसके प्रति उसका अनुराग होता है उसी से भाव छिपाने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है । महती उत्कण्ठा में भी प्रियतम की प्रार्थना के अवसर पर प्रतीप आचरण, गुणानुसरण में भी दोषादर्शन, अभिमत वस्तु में भी निषेधात्मक विधि ये कुछ स्त्री चरित्र की स्वभावगत विशेषताएँ है । यही कारण है कि भारतीय काव्य शास्त्रियों ने नायिका भेद का अधिक गहराई से विवेचन किया है, फलत: नायिकाओं की संख्या भी बहुत बढ गई है ।[१]

संस्कृत साहित्य शास्त्र में नायक - नायिका को तब विशेष महत्व दिया जाने लगा जब उस में रस की प्रतिष्ठा हो गई और रसों में भी शृंगार को रस-राजत्व प्राप्त हो गया तो शृंगार के आलम्बन-रूप नायक-नायिका को भी विशेष महत्व दिया जाने लगा और उनका विस्तृत वर्णन होने लगा ।

संस्कृत साहित्य में नायिका-भेद पर कामसूत्र और नाट्यशास्त्र दोनों का व्यापक प्रभाव है ।[२]

---

१ डॉ.रामसागर त्रिपाठी - समीक्षा शास्त्र के भारतीय एवं पाश्चात्य मानदण्ड - पृ.सं. २७१, अशोक प्रकाशन, नई सडक, दिल्ली-६ ।

२ डॉ.रामसागर त्रिपाठी - समीक्षा शास्त्र के भारतीय एवं पाश्चात्य मानदण्ड, पृ.सं. २७१, अशोक प्रकाशन, नई सडक, दिल्ली-६ ।

" कामशास्त्र के अनुसार नायिका के शारीरिक सौन्दर्य सम्बन्धी बत्तीस लक्षण बताए हैं। वे निम्नांकित हैं ---

| | | | |
|---|---|---|---|
| १. | नख - रक्त - वर्ण | २. | पादपृष्ठ-कछुए की पीठ जैसा |
| ३. | गुल्फ - गोलाकार | ४. | पैर की उँगली - अविरल |
| ५. | तलवा-लाल और शुभचिह्न युक्त | ६. | जंघा-गोल चढाव उतारदार |
| ७. | जानु - सुडौल | ८. | ऊरु - अविरल |
| ९. | भग - पीपल पत्र जैसी | १०. | भग का मध्य भाग - गुप्त |
| ११. | पेड - कूर्म पृष्ठवत् | १२. | नितम्ब - मांसल |
| १३. | नाभि - गम्भीर | १४. | नाभी का ऊपरी भाग-त्रिवली युक्त |
| १५. | स्तन-गोल और कठोर | १६. | पेट - मृदु, लोमरहित |
| १७. | ग्रीवा - कम्बुवत् | १८. | ओष्ठ-लाल |
| १९. | दाँत - कुंदवत् | २०. | वाणी - मधुर |
| २१. | नासिका - सीधी | २२. | नेत्र - कंजवत् |
| २३. | भौंह - धनुष्यवत् | २४. | ललाट - अर्धचंद्रवत् |
| २५. | कर्ण - कोमल | २६. | केश-नीले, सरकारे, सुकुमार |
| २७. | शीश - सुडौल | २८. | कलाई - गोल, कोमल |
| २९. | बाँह - सुडौल | ३०. | मणिबंध - नीचे को दबा हुआ |
| ३१. | हथेली - रक्तवर्ण | ३२. | हाथ की उँगली - पतली, सुडौल [1] " |

इन बत्तीस लक्षणों के अतिरिक्त नायिकाओं के अट्ठाईस ' अलंकार ' भी गिनाए गए हैं। उनमें से ३ अंगज, ७ अयुत्तन, और १८ स्वभावज होते हैं।

सौन्दर्य के इन लक्षणों और अलंकारों के होते हुए भी नायिका के लिए शृंगार करना आवश्यक होता है।

---

१ गोविन्द त्रिगुणायत - शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, पृ.सं. २३९, एस.चन्द एण्ड कम्पनी लि., रामनगर, नई दिल्ली।

१ उबटन, २ वस्त्र, ३ ललाट पर बिन्दी, ४ बाल की चोटी, ५ कान में कुंडल, ६ नाक में मोती की नथिया, ७ हार, ८ केसर का अनुलेपन, ९ अँगिया, १० पान, ११ कमर में करधनी, १२ हाथ में कंगन । चूड़ी आदि सोलह शृंगार भी नायिका के लिए बताए गए हैं ।[1]

कामशास्त्र की दृष्टि से डॉ. त्रिगुणायत जी की ' शास्त्रीय समीक्षा के सिध्दान्त ' पुस्तक में चार प्रकार की नायिकाओं का उल्लेख है --- १. पद्मिनी, २. चित्रिणी, ३. शंखिनी, ४. हस्तिनी ।

प्रकारानुसार इन के लक्षण निम्नांकित हैं ---

(१) पद्मिनी : पद्मिनी नारी कमनीय वदन वाली नवनीत या कमल दल के समान कोमल होती है। इसका मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर और नेत्र, हरिणी के शावक के समान चपल होते हैं । इसके शरीर से पद्मपराग की सुगन्ध आती है । नेत्रों के कारों में लालिमा छाई रहती है । उन्नत कुच बिल्वफल के समान मनोहर और आकर्षक होते हैं । नासिका तिल के पुष्प समान मृदु और मधुर होती है । वह धार्मिक बातों में रुचि रखती है । इसका शरीर चम्पा के समान गौर वर्ण होता है । राजहंसिनी की तरह इसकी गति होती है । हंसिनी के सदृश मधुर वाणी बोलती है । यह लज्जाशीला और मानिनी भी होती है । पति का आदर करती है और लक्ष्मीरूपा होती है ।

(२) चित्रिणी : पद्मिनी के बाद चित्रिणी की नारी श्रेष्ठ होती है । वह तन्वंगी, गजगामिनी, चपल दृग, संगीत शास्त्रान्विता होती है । वह आकार में न बहुत छोटी होती है न बड़ी । उसकी कटि

---

१ गोविन्द त्रिगुणायत - शास्त्रीय समीक्षा के सिध्दान्त - पृ.सं. २४१, एस.चन्द एण्ड कम्पनी लि., रामनगर, नई दिल्ली ।

क्षीण होती है । श्रेणी और पयोधर पीन होते हैं । बिम्बाफल के सदृश होठ होते हैं । चित्र, वस्त्र, माला, भूषण आदि शृंगार के बनाने में सदैव लगी रहती है, प्रणयोपचार की अनुरागिनी होती है इत्यादी ।

(३) शंखिनी : इस जाति की स्त्री इन दोनों की अपेक्षा हेय होती है । वह मोटी या पतली होती है । बाँहें लम्बी, सिर छोटा, पैर बडे होते हैं । छोटे स्तन होते हैं । लाल पुष्पों के समान वस्त्रों की इच्छा रखती है । पित्त प्रकृति की होती है । कर्कश स्वर बोलती है । इसकी नासिका उन्नत होती है । यह व्यभिचार में मन रखती है ।

(४) हस्तिनी : हस्तिनी नायिका इन सब में निकृष्ट होती है । वह बुरे ढंग से चलनेवाली होती है । पैर मोटी-मोटी उँगलियों से समन्वित होते हैं । आकार में गोलमटोल होते हैं । उसके शरीर से हाथी के मद के सदृश दुर्गन्ध आती है । ओठ चंचल और बडे होते हैं । आँखें पिंगल वर्ण की होती है । विलास और व्यभिचार में अनुराग रखती है ।[१]

नायिका भेद की परम्परा --

नायिका भेद को लेकर संस्कृत साहित्य शास्त्र में कोई नवीन वर्ग नहीं उठ खडा हुआ । उसका कोई विशेष महत्व भी नहीं था । आरम्भ में केवल नाट्य-शास्त्रों में ही नायक नायिका का वर्गीकरण एवं भेद प्रभेद का वर्णन होता था, जिससे कि नाटककार अपने पात्रों के शील, मर्यादा का आदि से अन्त तक उचित रीति से निर्वाह कर सके ।[२]

---

१ डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत, -शास्त्रीय समीक्षा के सिध्दान्त, पृ. सं. २४३ एस. चन्द एण्ड कम्पनी लि., रामनगर, नई दिल्ली ।

२ डॉ. नगेन्द्र - रीति काव्य की भूमिका - पृ. सं. १३२, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली ।

संस्कृत-साहित्य में नायिका-भेद पर `कामसूत्र` और `नाट्यशास्त्र` दोनों का व्यापक प्रभाव है ।`[1] कामसूत्र के प्रभाव को नायिका के शारीरिक सौन्दर्यसम्बन्धी बत्तीस लक्षणों एवं पद्मिनी , चित्रिणी, शंखिनी और हस्तिनी जैसे नायिका-भेद के अन्तर्गत हम देख चुके हैं ।

कामसूत्र जहाँ एक ओर यौन सम्बन्ध के विषय में अधिकारी ग्रन्थ है वहाँ दूसरी ओर उसमें नायिकाओं के स्वभाव और प्रभाव का भी यथेष्ट वर्णन प्राप्त होता है ।[2]

नाट्यसंबंधी ग्रन्थ तो मुख्यत: दो ही हैं -- एक भरत का `नाट्य-शास्त्र` और दूसरा धनंजय का `दश-रूपक` । साहित्य शास्त्र के अन्य अंगों की भाँति नायिका भेद का प्रथम निरूपण भरत ने ही किया है ।`[3]

(अ) भरत के अनुसार प्रकृति के विचार से स्त्रियाँ तीन प्रकार की होती हैं :-- उत्तमा, मध्यमा और अधमा ।

(१) उत्तमा -- अन्यासक्त नायक का भी हित चाहनेवाली ।

(२) मध्यमा -- नायक के अनुसार हित - अहित करनेवाली ।

(३) अधमा -- नायक द्वारा हित करने पर भी उसका अहित करनेवाली ।

(आ) अवस्थानुसार भरत ने नायिकाओं को आठ भेदों में विभक्त किया है :--

(१) प्रोषित - पतिका - जिसका नायक परदेश चला गया हो ।

---

१ डॉ.रामसागर त्रिपाठी - समीक्षाशास्त्र के भारतीय एवं पाश्चात्य मानदण्ड, पृ.सं. २७१, अशोक प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली ।

२ -- वही -- पृ.सं. २७१ - - वही -

३ डॉ.नगेंद्र - रीतिकाव्य की भूमिका - पृ.सं.१३२, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली ।

(२) खण्डिता - परासक्त नायक को देख ईर्ष्या से युक्त ।

(३) कलहान्तरिता - नायक से कलह कर पश्चाताप करनेवाली ।

(४) विप्रलब्धा - संकेत स्थान पर नायक के न आने से अपमानित ।

(५) उत्का । विरहोत्काण्ठिता - नायक के न आने से चिन्तित ।

(६) वासकसज्जा - नायक के आने से पूर्व शृंगार करनेवाली ।

(७) स्वाधीनपतिका - अपने गुणों से नायक को अधीन करनेवाली ।

(८) अभिसारिका - संकेत स्थलपर जानेवाली नायिका ।

( अवस्थानुसार नायिका भेद )[१]

(इ) इसके आगे भरत ने स्त्रियों के फिर तीन भेद किए हैं :---

(१) वेश्या २) कुलजा (३) प्रेष्या ( जो वास्तव में सामान्या, स्वकीया और परकीया के प्रकारान्तर ही हैं )[११]

इस वर्ग का आधार ` कर्म ` माना गया है । ` कर्म ` से तात्पर्य नारी-धर्म की दृष्टि से अनुचित उचित कर्म का है । अपने पति में अनुरक्त होना नारी का धर्म है और यह उसके लिए उचित कर्म है, पति को छोडकर दूसरे पुरुष से प्रेम करना अनुचित कर्म है और धन के लिए वार-विलास करना नीच कर्म है । किन्तु कर्म शब्द से कुछ व्यवसाय कर्म ( प्रोफेशन ) की गन्ध आती है, जो कि सामान्या के लिए तो ठीक है, परन्तु स्वकीया, परकीया के लिए उपयुक्त नहीं है ।[३]

वस्तुत: नायिका के ये तीन भेद नायक-नायिका के सामाजिक बन्धन को लेकर चले हैं । अत: इनके लक्षण इस प्रकार :---

---

१ डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत - शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, पृ.सं. २३६, एस.चन्द एण्ड कम्पनी, लि., रामनगर, नई दिल्ली ।

२ डॉ. नगेंद्र - रीतिकाव्य की भूमिका - पृ.सं. १३२, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली ।

३ डॉ. नगेंद्र - रीतिकाव्य की भूमिका - पृ.सं. १३२, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली ।

(१) स्वकीया ( कुलजा ) - यदि नायक नायिका का सम्बन्ध वैध अर्थात् लोक-वेद-सम्मत वैवाहिक सम्बन्ध हैं तो नायिका `स्वकीया` हैं ।

(२) परकीया ( प्रेष्या ) - यदि अवैध अर्थात् लोक-वेद-विरुध्द स्वतंत्र प्रेम का संबंध हैं तो नायिका `परकीया` हैं ।

(३) सामान्या ( वेश्या ) - यदि सम्बन्ध प्रेम का आदान-प्रदान न होकर व्यावसायिक हैं तो वह `सामान्या` हैं ।[१]

भरत के अनुसार नायिकाओं का वर्गीकरण

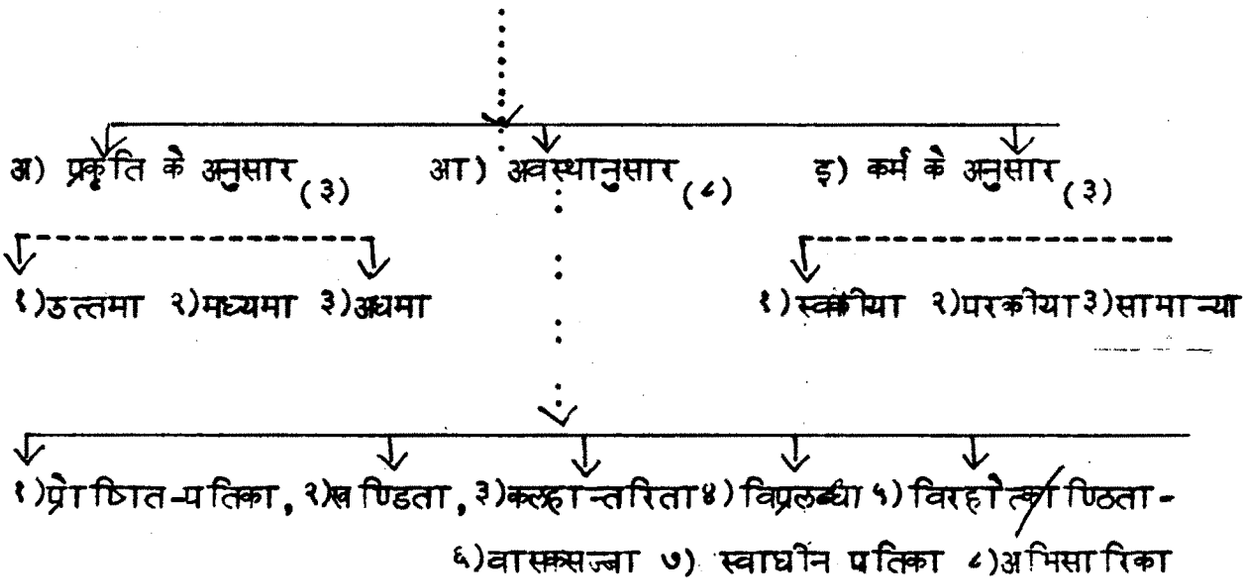


नायिका भेद की परम्परा में परवर्ती आचार्यों में `धनंजय` नाम उल्लेखनीय हैं । उनका विवेचन स्वभावत: भरत की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित और पूर्ण हैं । वास्तव में उनसे पूर्व रुद्रट और रुद्रभट्ट उसकी व्यवस्था और विधान दे चुके थे । धनंजय ने भरत के प्रकृति,अवस्था और कर्म के अतिरिक्त वय-भेद का भी पूरा विस्तार किया हैं । उन्होंने इस आधार पर १)मुग्धा, २)मध्या और

---

१ डॉ.नगेंद्र रीति काव्य की भूमिका, पृ.सं.१३७ - नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली ।

३) प्रगल्भा ऐसे तीन भेद बताए हैं ।[१]

१) मुग्धा-इसमें लज्जाधिक्य और उत्कण्ठा की न्यूनता पाई जाती हैं ।

२) मध्या- इसमें दोनों तत्व समकोटिक होते हैं और

३) प्रौढा - इसमें लज्जा की न्यूनता और उत्कण्ठा की अधिकता पाई जाती हैं ।[२]

वात्स्यायन के 'कामसूत्र' और भरत के 'नाट्यशास्त्र' इन ग्रंथों के अतिरिक्त नायिका भेद के प्रमुख ग्रंथ हैं -- धनंजय का 'दशरूपक', भानुदत्त की 'रसमंजरी' और विश्वनाथ का 'साहित्यदर्पण' इन ग्रंथों और विशेषकर भानुदत्त की रसमंजरी के आधार पर हिन्दी साहित्य के रीतिकाल में नायिका-भेद विषयक बहुत से ग्रंथ लिखे गए । वास्तविकता यह हैं कि नायिका भेद रीतिकाल के प्रमुख विषयों में से एक रहा हैं ।[३]

नायिका - भेद की जो परिपाटी चली,उसका आदिम ग्रन्थ रुद्रभट्ट का 'शृंगार-तिलक' ही माना जा सकता हैं, क्योंकि वही काव्य-शास्त्र का सबसे प्रथम ग्रंथ है, जिसमें शृंगार को मुख्य रस मानकर उसके अंगों उपांगों अर्थात् सम्भोग, विप्रलम्भ,नायक-नायिका की काम-दशा,मान-मोचन के उपाय आदि की स्वतंत्र रूप से व्याख्या मिलती हैं । 'शृंगार-तिलक' के बाद इस प्रकार का दूसरा ग्रंथ भोज का 'शृंगार-प्रकाश' हैं जिसमें शृंगार ही एक रस माना गया हैं । इसके बाद

---

१ डॉ.नगेन्द्र - रीति काव्य की भूमिका - पृ.सं.१३३,नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

२ डॉ.रामसागर त्रिपाठी - समीक्षा शास्त्र के भारतीय एवं पाश्चात्य मानदण्ड,पृ.सं. २७२,अशोक प्रकाशन,नई सडक, दिल्ली ।

३ डॉ.रामसागर त्रिपाठी - समीक्षा शास्त्र के भारतीय एवं पाश्चात्य मानदण्ड, पृ.सं. २७२ - अशोक प्रकाशन, नई सडक, दिल्ली ।

शृंगार - परक ग्रंथों की झाडी लग गई जिनमें शारदातनय का `भाव-प्रकाश` शिंगभूपाल का `रसार्णव` और भानुदत्त के दो ग्रंथ `रसतरंगिणी` और `रसमंजिरी` विशेष महत्वपूर्ण हैं। इनमें सबसे व्यवस्थित ग्रन्थ हैं --`रसमंजिरी` जो हिन्दी नायिका भेद का मूलाधार हैं।[1]

नायिका भेद का यह प्रकरण रीतिकालीन आचार्यों तक जारी रहा। इस दृष्टि से चिन्तामणि, जसवंतसिंह, मतिराम, भिखारीदास, पद्माकर तथा गुलामनवी रसलीन आदि आचार्यों द्वारा प्रस्तुत नायिका भेद उल्लेखनीय हैं।[2]

संक्षेप में ----

नायिका - भेद निरूपण की परम्परा

| अ) कामशास्त्र | आ) नाट्यशास्त्र | इ) काव्यशास्त्र |
|---|---|---|
| १. वात्स्यायन-कामसूत्र | १. भरत-नाट्यशास्त्र | १. रुद्रभट्ट-शृंगार तिलक |
| | २. धनंजय -दशरूपक | २. भोज - शृंगार प्रकाश |
| | | ३. शारदातनय - भावप्रकाश |
| | | ४. शिंगभूपाल - रसार्णव |
| | | ५. भानुदत्त - रसतरंगिणी - रसमंजिरी |

---

१ डॉ. नगेंद्र - रीति काव्य की भूमिका - पृ.सं. १३४, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली।

२ डॉ. कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध - पृ.सं. ४६७, रोगल बुक डिपो, दिल्ली।

संक्षेप में,

नायिकाओं का वर्गीकरण

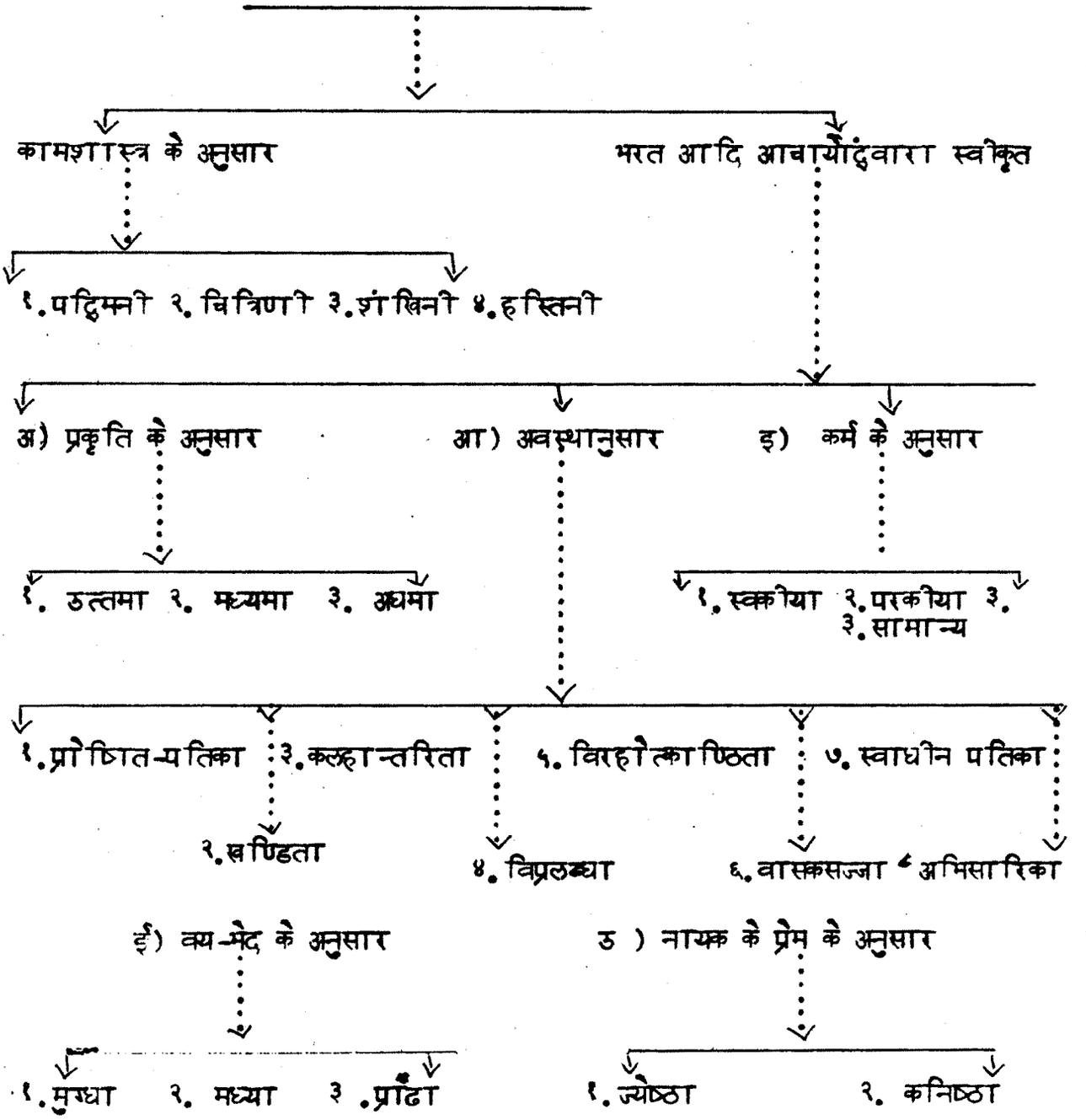


नायिका - भेद का मनोवैज्ञानिक आधार --

नायिका के साधारण लक्षण से ही नायिका - भेद का मनोवैज्ञानिक

आधार समझा में आएगा - `नायक की ही भाँति त्याग, कृतित्व, कुलीनता, लक्ष्मीरूप यौवन, चातुर्य विदग्धता, तेज और उसके साथ ही शील आदि के गुण युक्त अनुराग की पात्र स्त्री काव्य की नायिका होती है।` नायिका को इन गुणों से अलंकृत मानने का मूल कारण हमें रस के `साधारणीकरण` सिद्धान्त में मिल सकता है। साधारणीकरण मुख्यत: आलम्बन ही का होता है। अतएव शृंगार का आलम्बन `नायिका` का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि वह सभी के साथ रति-भाव की आलम्बन हो सके। इसी दृष्टि से उसमें उपर्युक्त गुणों को अनिवार्य मानकर उसके अन्तर्बाह्य को आकर्षक रूप दिया गया है।[1]

नायिका-भेद का मूल्यांकन --

नायिका - भेद के सारे निरूपण आधार - लौकिक - अलौकिक जातियों के शील, नायक के प्रति नायिका का प्रेम, नायिका के सामाजिक बन्धनों, उसकी अवस्था, धर्म और गुण, उसकी व्यक्तिगत विशेषाता, शारीरिक गठन, अंग विन्यास, रुचि, प्रकृति और यौनभावना की विभिन्नता तथा लौकिक व्यवहार हैं। नायिका - भेद के उपर्युक्त आधार अधिकांशत: स्थूल एवं बाह्य हैं और यही कारण है कि ये आधार रीतिकालीन शृंगारपरक रचनाओं के लिए सर्वथा उपयुक्त थे।[2]

डॉ. नगेंद्र जी के शब्दों में नायिका-भेद के गुण-दोषों का विवेचन इस प्रकार किया जा सकता है ---

१. इस वर्गीकरण में `चरित्र-चित्रण` एवं `शील-निरूपण` का अत्यन्त स्थूल प्रयत्न मिलता है। स्थूल इसलिए कि यह सर्वथा वर्गगत है, व्यक्तिगत नहीं।

---

१ डॉ. नगेंद्र - रीति काव्य की भूमिका - पृ.सं.१३६, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली।

२ डॉ. कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध, पृ.सं.४६७, रीगल बुक डिपो, दिल्ली।

२. यह वर्गीकरण इस सिध्दान्त को लेकर चला हैं कि मानव-प्रकृति मूलत: एक हैं । वास्तव में यह सिध्दान्त आत्यन्तिक रूप में चाहे ठीक भी हो, परन्तु सामान्यत: अधिक व्यवहार्य नहीं हैं, क्योंकि प्रकृति की एकता प्राय: दुर्लभ हैं ।

३. इसके अतिरिक्त इस विभाजन में एक और स्पष्ट दोष यह हैं कि एक तो यह प्रेम अथवा काम-वृत्ति के बाह्य रूप को ही लेकर चला हैं । काम-वृत्ति अपने रूप में स्वतंत्र वृत्ति अवश्य हैं, पर जीवन के व्यवहार तल पर उस पर अन्य प्रवृत्तियों की भी क्रिया - प्रतिक्रिया होती हैं यह असंदिग्ध हैं । हमारे नायिका-भेद में इसका ध्यान नहीं रखा गया । उसका तो मुख्य-वाक्य यही हैं कि सब कुछ होते हुए भी स्त्री केवल स्त्री ही हैं ।[१] फिर भी डॉ.नगेंद्र जो नायिका-भेद का महत्व अस्वीकार नहीं करते -

नायिका के इन भेद-प्रभेदों का आधार मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अधिक पुष्ट नहीं हैं परन्तु उसे सर्वथा अनर्गल फिर भी नहीं कहा जा सकता । तात्पर्य यह हैं कि यह विभाजन नारी की आन्तरिक मनोवृत्तियों से सम्बध्द किसी एक निश्चित एवं सर्वव्याप्त आधार को लेकर नहीं किया गया ,परंतु उसके पीछे कोई आधार या संगति ही न हो यह बात भी नहीं हैं ।[२]

## उपसंहार

उपसंहार के रूप में नायिकाओं के प्राचीन स्वरूप के सन्दर्भ में शोधकर्ता निम्नलिखित निष्कर्षों तक पहुँचता हैं --

---

१ डॉ.नगेंद्र - रीति काव्य की भूमिका - पृ.सं.१४०, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली ।

२ डॉ.नगरेंद्र - रीति काव्य की भूमिका - पृ.सं.१३६, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली ।

(१) आरम्भ में केवल नाट्यशास्त्रों में ही नायक-नायिका का वर्गीकरण एवं भेद-प्रभेद का वर्णन होता था, जिससे कि नाटककार अपने पात्रों के शील, मर्यादा का आदि से अन्ततक उचित रीति से निर्वाह कर सके ।

(२) संस्कृत साहित्य में प्राचीन नायिकाओं का स्वरूप निर्धारित करने में कामशास्त्र, नाट्यशास्त्र और काव्यशास्त्र इनका मिला-जुला योगदान रहा है ।

(३) स्त्रियों के रूप, गुण, शील आदि के आधार पर इतने अधिक भेद गिना दिए गए हैं कि कभी कभी उनकी संख्या साढ़े तीन-सौ के ऊपर भी चली जाती है । परंतु इनमें प्रकृति, अवस्था, कर्म, वय, भेद, नायक प्रेम तथा कामशास्त्र के अनुसार बताए गए भेद ही प्रमुख हैं ।

(४) नायिकाओं का प्राचीन स्वरूप निरूपण करने में वात्स्यायन कामसूत्र भरत का नाट्यशास्त्र, धनंजय का दशरूपक, रुद्रभट्ट का शृंगार तिलक, भोज का शृंगार प्रकाश, शिंगभूपाल का रसार्णव, भानुदत्त के रसतरंगिणी और रसमंजिरी इन ग्रंथों का प्रमुख योगदान रहा है ।

(५) यद्यपि आधुनिक साहित्य की दृष्टि से विद्वानों के मत से नायिकाओं का प्राचीन स्वरूप निर्धारित करने वाला नायिका भेद कम महत्वपूर्ण लगता है फिर भी नायिकाओं के प्राचीन स्वरूप की यह प्रमुख आधार शैली है ।

(२) नायिकाओं का अर्वाचीन ( आधुनिक ) स्वरूप --

नायिका-भेद की चर्चा भरत मुनि से आचार्य विश्वनाथ, भानुमिश्र तक निरंतर चलती रही । स्त्रियों के रूप, गुण, शील आदि के आधार पर इतने अधिक भेद गिना दिये गए कि उनकी संख्या कभी कभी तो ३८४ तक हो गई । नायिका-भेद

का यह प्रकरण रीतिकालीन आचार्यों तक जारी रहा । इसी दृष्टि से चिन्तामणि, जसवंतसिंह, मतिराम, भिखारीदास, पद्माकर तथा गुलाम नवी रसलीन आदि आचार्यों द्वारा प्रस्तुत नायिका भेद उल्लेखनीय हैं । परंतु जैसा कि इसके पूर्व भाग में हमने देखा हैं नायिका-भेद के आधार अधिकांशत: स्थूल एवं बाह्य हैं और यही कारण हैं शायद कि ये आधार रीतिकालीन शृंगारपरक रचनाओं के लिए सर्वथा उपयुक्त थे ।

किन्तु आधुनिक-युग की परिस्थितियाँ एकदम बदली हुई हैं और स्वभावत: शारीरिक गठन और अंग विन्यास को लेकर बनाये गए नायिका - भेद आधुनिक साहित्य की प्रकृति के अनुरूप नहीं होता ।

आधुनिक साहित्य में नायिका की परिकल्पना नारी के आधुनिक परिवेश, आधुनिक भारत में नारी की बदलती हुई परिस्थितियाँ आदि को लेकर की गई हैं ।

हिन्दी कहानियों में नायिका की परिकल्पना --

नारी पात्रों में नायिका का महत्वपूर्ण स्थान होता हैं । उसका कथा संगठन में प्रमुख स्थान होता हैं । उसे ही नायक की भाँति फलागम की स्थिति प्राप्त होती हैं और कथा के सूत्र उसके हाथ में होते हैं । नायिका का अर्थ वही लेना चाहिए , जो अंग्रेजी में ` हिरॉइन ` शब्द का होता हैं ।

नायिकाओं की अनेक श्रेणियाँ होती हैं । प्रत्येक कहानीकार नारी को विभिन्न दृष्टिकोण से परखता हैं । उन्हें कोई वीरांगना के रूप में, कोई जासूस के रूप में, कोई केवल माँ के रूप में चित्रित करता हैं । कोई केवल विलासिनी के रूप में और कोई केवल उन्हें प्रेमिका के रूप में देखता हैं और उसी रूप में चित्रित करता हैं ।

नायिका के निर्वाचन में तत्कालिन युग की परिस्थितियाँ, सामाजिक मर्यादाओं, नैतिक आदर्शों और स्वयं लेखक की अपनी मान्यताओं एवं धारणाओं का अत्यन्त प्रभाव पडता हैं । उसका स्वरूप एक प्रकार से इन्हीं बिंदुओं के मध्य निर्धारित होता हैं ।

आर्थिक दृष्टि से सुदृढता लाने और राष्ट्र का नव-निर्माण करने की प्रमुख समस्या आज हमारे सम्मुख है । इन परिस्थितियों में आवश्यक है कि नारियाँ भी इस सामाजिक संघर्ष में हमारे कन्धे से कन्धा मिलाकर चलें और हमें अपने अन्तिम उद्देश्य की अन्तिम सीमा तक पहुँचने में सहायता दें ।

आज नारी अपने अपने अधिकारों से वंचित नहीं है । उसे सामाजिक और राजनीतिक सभी अधिकार प्राप्त है । वह परिवर्तित परिस्थितियों में केवल भोग या विलास की सामग्री मात्र नहीं रह गई ।

घर का सीमित दायरा अब उसके विकास की राह में समस्या नहीं है । यद्यपि उसका दुरुपयोग भी हुआ है और नारियाँ मृगतृष्णा के संसार में अपना जीवन जी रही है ।

आज की अधिकांश कहानियों की नायिकाएँ इसी सन्दर्भ में कल्पित की जाने लगी है । अब किसी भी कहानी की नायिका पूर्ण रूपेण भारतीय परम्पराओं और नारीगत स्वाभाविक मर्यादाओं से ओत-प्रोत नहीं चित्रण की जाती ।

डॉ. सुरेश सिनहा के अनुसार - मानव जीवन में जिस प्रकार विविधता है उसी भाँति हिन्दी कहानियों में भी विविधता है । नारी जीवन के जितने रूप हो सकते है, कहानियों में प्राय: उन्हीं का चित्रण किया जाता है और किया जा रहा है । हिन्दी कहानियों में नायिकाओं की श्रेणियाँ निम्न दो प्रमुख वर्गों में बन सकती है --

१) वासनात्मक ।

२) अवासनात्मक ।

(१) वासनात्मक -- के अन्तर्गत नारी के वेश्या, प्रेमिका, नर्तकी, आधुनिक विलासिनी तथा विवाहिता आदि रूप रखे जा सकते है ।

(२) अवासनात्मक - वर्ग में नारी के माँ-बहन आदि रूप रखे जा सकते है ।

इन दो प्रमुख आधारों के अतिरिक्त निम्नलिखित चार तथ्यों को भी कहानियों की नायिकाओं का वर्गीकरण करते समय महत्वपूर्ण समझाना चाहिए

१) समाज में नारी की स्थिति
२) कहानी लेखिका की स्थिति
३) कहानी शिल्प में प्रयोग
४) स्थानीयता ।

इन आधारों पर कहानी - नायिकाओं की निम्न श्रेणियाँ बनाई जा सकती हैं ।

१) सफल प्रेमिकाएँ
२) असफल प्रेमिकाएँ
३) सद्गृहस्थ नायिकाएँ
४) असफल गृहस्थ नायिकाएँ
५) फैशन परस्त विलासिनी नायिकाएँ
६) विधवा नायिकाएँ
७) कुण्ठाग्रस्त नायिकाएँ
८) वेश्याएँ
९) नर्तकी नायिकाएँ
१०) राजनीति में भाग लेनेवाली नायिकाएँ
११) वीरांगनाएँ
१२) कृषक बालाएँ
१३) मजदूरिनें
१४) जासूस नायिकाएँ
१५) आधुनिक नायिकाएँ ।[१]

सफल प्रेमिकाओं की श्रेणी में मोहन राकेश की `जानवर और जानवर` निर्मल वर्मा की `माया का मर्म` आदि कहानियों की नायिकाएँ आएँगी । असफल प्रेमिकाएँ निर्मल वर्मा की `परिंदे`, मोहन राकेश की `पाँचवे माले का फ्लैट`, नरेश मेहता की `एक इतिश्री`, राजेन्द्र यादव की `छोटे छोटे ताजमहल` ऊषा प्रियंवदा की `कोई नहीं`, मन्नू भण्डारी `यही सच है` अमरकान्त की `एक असमर्थ हिलता

---

१ डॉ. सुरेश सिन्हा - हिन्दी कहानी उद्भव और विकास - पृ.सं. ८३ , अशोक प्रकाशन, नई सडक, दिल्ली ।

हाथ` की नायिकाएँ कही जाएँगी ।

अमरकान्त की` दोपहर का भोजन` की नायिका सद्गृहस्थ नायिकाओं की श्रेणी में आएगी । **बरेश** मेहता की ` अग्नीता व्यतीत`, मोहन राकेश की ` सुहागिनें`, राजेन्द्र यादव की` टूटना`, मन्नू भण्डारी की` कील और कसक `, ऊषा प्रियंवदा की` झूठा दर्पण` आदि कहानियों की नायिकाएँ असफल गृहस्थ नायिकाएँ हैं । राजेन्द्र यादव की` एक कटी हुई कहानी` की नायिका फैशन परस्त विलासिनी नायिकाओं की श्रेणी में आएगी । कमलेश्वर की ` देवा की माँ`, विधवा नायिका है ।[१]

इसी प्रकार दूसरी श्रेणियों में भी अन्य अनेक नायिकाएँ हिन्दी कहानियों में चित्रित हुई हैं ।

हिन्दी उपन्यासों में नायिका की परिकल्पना --

उपन्यासों में नारी-पात्र मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं - नायिका तथा सहनायिका । नायिका का स्थान नारी-पात्रों में सर्वोच्च होता हैं और उसके माध्यम से उपन्यास की मूल कथा को गति मिलती हैं । नायिका का आशय उपन्यास के ऐसे नारी-पात्र से होता हैं जो कि मूल कथा को सफलतापूर्वक अन्तिम उद्देश्य तक ले जाती हैं ।

नायिका उपन्यास के सभी पात्रों में अलग दिखाई देती हैं । प्रेमचंद जी के ` निर्मला` उपन्यास की नायिका` निर्मला` का उदाहरण हम ले सकते हैं । संभवत: उपन्यासकार भी नायिका के माध्यम से अपनी बात कहता हैं । उपन्यास की सभी प्रमुख घटनाएँ नायिका से किसी न किसी रूप में जुडी होती हैं ।

डॉ. कृष्णदेव शर्माजी उपन्यास-नायिका की परिभाषा इस प्रकार की हैं --` नायिका उपन्यास की मूल कथा का नेतृत्व करती हैं, उपन्यास के सभी पात्रों

---

१ डॉ.सुरेश सिनहा - हिन्दी कहानी उद्भव और विकास - पृ.सं.४३, अशोक प्रकाशन, नई सडक, दिल्ली ।

की अपेक्षा अधिक सशक्त और आकर्षक होती है, कथानक के प्रत्येक मोड पर उसके दर्शन होते है, उपन्यास के उद्देश्य के प्रति सतत रूप से प्रवृत्त होती है और उपन्यास का अन्त अनिवार्यत: नायिका से जुडा होता है ।[१]

नायिकाओं की श्रेणियों को १) युग की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितियाँ २) उपन्यासकारों का उद्देश्य और ३) उपन्यासकारों का दृष्टिकोण ये तीन प्रमुख आधार निर्धारित करते है ।

(१) युग की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियों में हम देख सकते हैं कि एक युग ऐसा था जिसमें चित्रित नायिकाएँ भावुक गृहलक्ष्मियाँ है अर्थात् इसका कारण उस युग की सामाजिक, राजनीतिक तथा नैतिक परिस्थितियाँ थी । उस युग के नारी के लिए सामाजिक संघर्ष शब्द अनसुना था ।

इसके विपरीत आधुनिक युग में सामाजिक परिस्थिति एकदम बदली हुई है । चारों तरफ एक संघर्ष की-सी स्थिति बनी हुई है । विश्वव्यापी असंतोष, तनाव अतृप्ति और कुण्ठा के कारण आज की नारी यथार्थवादी बनी हुई है ।

(२) उपन्यासकारों का उद्देश्य भी नायिकाओं का स्वरूप निर्धारित करता है । हिन्दी उपन्यासों में प्रेमचंद, जैनेन्द्र, अश्क आदि उपन्यासकारों ने नारी को घर की चारदीवारी के भीतर बँधी रहने वाली असहाय नारी के रूप से उठाकर एक ऐसे धरातल पर प्रतिष्ठित किया है जहाँ वह जीवन की वास्तविकता को खुली आँखों से देखती और परखती है ।

परन्तु आधुनिकता और वास्तवता के नाम पर पश्चिम के मनोविश्लेषणवाद को लेकर कई उपन्यासकारों ने नैतिकता के मानदण्डों का खुलकर अतिक्रमण भी किया है । मनोविज्ञान के सिध्दान्तों की आड में उपन्यासकार नायिका की ऐसी

---

१ डॉ. कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध - पृ.सं.४५५ , रोगल बुक डिपो, दिल्ली ।

परिकल्पनाएँ प्रस्तुत कर रहे हैं जिन्हें संभवत: आज की नारी भी सहज ही स्वीकार न कर सके ।

(३) नायिका की परिकल्पना में उपन्यासकार का दृष्टिकोण भी अपना महत्व रखता हैं । प्रेमचंद के पहले के उपन्यासों में उपन्यास कारों की दृष्टि सुधारवादी रही हैं । इन उपन्यासकारों ने नारी को पतनोन्मुख होने से बचाया हैं । प्रेमचंद ने आदर्शवादी परिकल्पनाएँ प्रस्तुत की हैं । ऐसे उपन्यासकार प्राचीन के प्रति श्रध्दा रखते हुए कठोर यथार्थ से खण्डित एवं जर्जर हुए आदर्श की पुन: प्रतिष्ठा करते हैं ।

यथार्थवादी दृष्टिकोण रखने वाले उपन्यासकार नायिका को उसके यथार्थ रूप में चित्रित करते हैं । प्रेमचंद के उपन्यासों की नायिकाएँ निर्मला और धनिया जीवन के यथार्थ के कठोर धरातल पर विचरण करते हुए दिखाई गई हैं ।

कुछ उपन्यासकारों की नायिकाओं में सेक्स ही सेक्स हैं ।

इस प्रकार नायिकाओं की परिकल्पना में उपन्यासकार के नारी विषयक दृष्टिकोण का अत्यधिक महत्व होता हैं यह स्पष्ट होता हैं ।

उपन्यास में नायिका की परिकल्पना के स्त्रोत --

इन्हें दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता हैं --(१) परम्परागत स्त्रोत (२) आधुनिक स्त्रोत ।

(१) परम्परागत स्त्रोतों में नारी का मातृरूप ( प्रेमचन्द के `गोदान` की `धनिया` ) आदर्श एवं पतिव्रता पत्नी रूप ( जैनेन्द्र के `कल्याणी` उपन्यास की नायिका `कल्याणी` ) , भगिनी रूप आदि आ सकते हैं । इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय जागरण एवं राष्ट्रीयता से परिपूर्ण उपन्यासों में जिन आदर्श नारी पात्रों की सर्जना की जाती हैं, वे भी इन्हीं परम्परागत स्त्रोतों के अन्तर्गत आते हैं । ( वृन्दावनलाल वर्मा जी के ऐतिहासिक उपन्यासों की अधिकांश नायिकाएँ भारतीय इतिहास में से ही खोजकर निकाली गई हैं ।)

(२) आधुनिक स्त्रोतों के अन्तर्गत आधुनिकता की दौड में अग्रसर नारी-चेतना और नारी - मन की बारीकियों को ध्यान में रखते हुए नायिकाओं की परिकल्पना की जाती है । इस स्त्रोत के अन्तर्गत ऐसी नायिकाओं की अधिकांश रूप में की गई जो अपने स्वतंत्र आस्तित्व का विकास चाहती थीं ।[१]

इस तरह परम्परागत स्त्रोतों के आधार पर नायिकाओं के स्थूलत: दो भेद --

(१) वासनात्मक और

(२) अवासनात्मक किये जा सकते हैं ।

तथा नारी की नवीन चेतना के फलस्वरूप डॉ.कृष्णदेव शर्माजी ने नायिकाओं के कुछ अन्य भेद भी माने हैं -- सफल प्रेमिकाएँ, असफल प्रेमिकाएँ, गृहस्थ में असफल नायिकाएँ, विधवा, विलासिनी, वेश्याएँ, नर्तकियाँ, कृषाक बाला आदि । अध्ययन की दृष्टि से उन्होंने इन नायिकाओं को तीन मोटे भेदों के अधीन रखा हैं :--

(१) प्रेमिकाएँ :- प्रेमिकाओं के अधीन प्रेम में सफल तथा असफल दोनों प्रकार की नायिकाएँ आ जाती है ।

(२) गृहस्थ नायिकाएँ -- ये भी दो प्रकार की हैं । एक जो अपने गृहस्थ, जीवन का सफल निर्वाह करती हैं, दूसरे ऐसी गृहस्थ नायिकाएँ जो गृहस्थ में व्यस्त होने पर भी पर-पुरुष से सम्बन्ध स्थापित कर लेती हैं अथवा जिनके अपने पति के साथ सुखद सम्बन्ध नहीं होता - ऐसी गृहस्थ नायिकाएँ असफल कही जाती हैं ।

(३) अन्य प्रकार की नायिकाएँ -- इस में नर्तकियाँ, विलासिनी, वेश्याएँ, कृषाक बालाएँ और वीरांगनाएँ आदि आती हैं ।[२]

---

१ डॉ.कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध - पृ.सं.,४६० रीगल बुक डिपो, दिल्ली -६ ।

२ डॉ.कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध - पृ.सं.,४६१ रीगल बुक डिपो, दिल्ली-६ ।

## हिन्दी नाटकों में नायिका की परिकल्पना ---

हिन्दी में नाटकों का उदय उन्नीसवीं शताब्दि के उत्तरार्ध में हुआ था । अध्यापन की सुविधा की दृष्टि से हिन्दी नाटक साहित्य को इतिहासकारों ने पाँच कालों में विभाजित किया है :--

(१) भारतेन्दु युग --

यह राष्ट्रीय जागरण का युग कहा जाता है । इस युग में रूढिवादी परम्पराओं और अन्धविश्वासों में जकडा हुआ समाज जीवन उन्मुक्त हो उठा । कतिपय समाज सुधारक संस्थाओं ने नारी की स्थिति में स्पष्ट सुधार-कार्य किए । भारतेन्दु युग के अधिकांश नाटक ( वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, पाखण्ड विडम्बन, धनंजय, भारत जननी ) भारत के पुनरुत्थान एवं नवजागरण की कथा कहते हैं ।

इस युग के नाटकों की विविध नायिकाओं को मुख्यत: चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है --

(१) आदर्शोन्मुख पौराणिक नायिकाएँ
(२) आदर्शोन्मुख ऐतिहासिक नायिकाएँ
(३) धार्मिक प्रवृत्ति की नायिकाएँ
(४) राष्ट्रवादी नायिकाएँ ।[१]

इस युग के नाटकों की नायिकाओं के बारे में डॉ. कृष्णदेव शर्मा कहते हैं कि ये नायिकाएँ तत्कालिन नारी समाज का सच्चा प्रतिनिधित्व कर रही थीं । उस युग की नारी की मुख्य समस्याएँ थी -- बालविवाह, पुरुष का सामाजिक प्रभुत्व और स्त्री की दासता, विधवा विवाह, अनमेल विवाह, नारी स्वातंत्र्य, पर्दा प्रथा, स्त्री शिक्षा तथा वेश्या वृत्ति ।[२]

---

१ डॉ. कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध - पृ.सं. ४६८
रोगल बुक डिपो, दिल्ली ६ ।

२ डॉ. कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध - पृ.सं. ४६८
रोगल बुक डिपो, दिल्ली-६।

भारतेन्दु युग के समस्त नाट्य साहित्य की नायिकाओं को मुख्यत: तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है -- प्रेमिकाएँ, गृहस्थ नायिकाएँ तथा आधुनिक चेतना संपन्न नायिकाएँ ।

(२) द्विवेदी युग --

इस युग पर स्वामी विवेकानन्द के दर्शन की गहरी छाप पडी थी । नारी - सुधार की दिशा में एनीबीसेण्ट नामक विदेशी महिला ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया था । इस युग में गिने-चुने नाटकों की रचना की गई किन्तु नायिका की परिकल्पना में किसी प्रकार का विकास नहीं दिखाई देता ।

(३) प्रसाद युग --

हिन्दी के नाट्य साहित्य का जन्म भारतेन्दु युग में हुआ था परंतु प्रसाद - युग में उसका यौवन विकास हुआ । स्वयं प्रसाद जी ने नायिकाओं को प्राचीन परम्पराओं एवं रूढियों की जकड से मुक्त कराया ।

प्रसाद-युग की नायिकाएँ पुराणों अथवा इतिहास के पृष्ठों से उधार ली गई नायिकाएँ नहीं हैं अपितु उनमें जीवन की नई चेतना, नए मूल्य प्रतिफलित हुए हैं ।

प्रसाद की नायिकाओं के बारे में कहा जाता है कि प्रसाद जी के पुरुष पात्रों की अपेक्षा स्त्री-पात्र अधिक सफल और सजग तथा सजीव हैं । प्रसाद जी के नाटक स्त्रीत्व प्रधान हैं । जो तेज अजातशत्रु की छलना में और मल्लिका में है, राज्यश्री में है, स्कन्दगुप्त की अनन्तदेवी, देवसेना और विजया में है वह पुरुषों में नहीं मिलता ।

प्रसाद युग की और खास करके प्रसाद की नायिकाओं का विवेचन चार श्रेणियों में डॉ.नगेंद्र जी करते हैं :-

क) राजनीति की आग से खेलने वाली राजमहिषियाँ

ख) जीवन-युद्ध में प्रेम का सम्बल लेकर कूदने वाली स्वाभिमानिनी

ग) जीवन की भँवर में पडी हुई मध्यवर्गीय दुर्बल नारियाँ

घ) अपने निस्पृह बलिदान से नाटक के जीवन में एक करुण गन्ध छोड़ने वाली फूल - सी सुकुमारियाँ ।

(४) प्रसादोत्तर युग --

इस युग में भारत की आधुनिक नारी के सर्वप्रथम दर्शन होते हैं । जीवन के बहुविध क्षेत्रों में नारी पुरुष के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर बढ़ रही थी । इस युग की नारी ने मुक्त वातावरण में साँस ली । इस समय तक भारत के जन-जीवन पर पाश्चात्य सभ्यता और संस्कारों का पूरा प्रभाव पड़ चुका था अत: इस युग की नायिकाएँ भारतीय एवं पाश्चात्य आदर्शों के मध्य टूटती-बनती दीखती हैं ।

इस युग की अधिकांश नायिकाएँ प्रेम और वासना, प्रेम और विवाह, पाप और पुण्य के समाधान ढूँढने के लिए आतुर दीखती हैं । भारतीय नारी की प्राचीन परम्पराएँ एक-एक करके दम तोड़ती हुई दीखती हैं । इस दृष्टि से लक्ष्मीनारायण मिश्र के ' राजयोग ' की नायिका चम्पा, ' सिन्दूर की होली ' की नायिका मनोरमा उल्लेखनीय हैं ।

(५) स्वातंत्र्योत्तर युग --

इस युग में भारतवर्ष की राजनीतिक एवं सामाजिक परिवर्तनों में महत्त्वपूर्ण मोड़ उपस्थित हुए । परम्परागत सामाजिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई और समाज - जीवन की धारा ही बदल गई ।

' प्रसादोत्तर युग में तो नारी को केवल स्वतंत्र सत्ता स्थापित हुई थी किन्तु स्वातंत्र्योत्तर युग में नारी को पूर्ण स्वच्छन्दता प्राप्त हो गई । सामाजिक मान-मर्यादाओं की अवहेलना होने लगी और इस युग की नारी पाश्चात्य नारी को प्राप्त स्वच्छन्दता की झोंक में भारतीय नारी के सच्चे आदर्शों से दूर हटती चली गई ।

पाश्चात्य भौतिकवाद एवं मनोविश्लेषणवाद के कारण नारी की मांसल बाहें और कंचन-सी देह ही नाटकों का उपजीव्य बन गई ।[१]

---

१ डॉ. कृष्णदेव शर्मा - अनुपम साहित्यिक निबंध - पृ.सं. ४७७ , रीगल बुक डिपो, दिल्ली-६ ।

## उपसंहार --

नायिकाओं के अर्वाचीन अर्थात् आधुनिक स्वरूप का विवेचन करने के उपरान्त शोधकर्ता उपसंहार के अंतर्गत निम्नलिखित मुद्दों का संकलन करता है --

१) आधुनिक साहित्य ( कहानी, उपन्यास, नाटक ) में नायिका की परिकल्पना नारी के आधुनिक परिवेश, नारी की बदलती हुई परिस्थितियाँ आदि को लेकर की गई हैं जिनमें प्रमुखतया
अ) युग की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितियाँ,
आ) साहित्यकारों का उद्देश्य, एवं
इ) साहित्यकारों का दृष्टिकोण
ये प्रमुख घटक है ।

२) आधुनिक नायिकाओं का स्वरूप प्राचीन नायिकाओं के स्वरूप से भिन्न हैं । नायिकाओं का स्वरूप नायिकाओं के अंग-प्रत्यंग के वर्णन तक ही सीमित न रहकर साहित्य में नायिकाओं के मनोविश्लेषण का प्रयास आरम्भ हुआ और चरित्र-चित्रण को अपेक्षातया अधिक महत्व प्राप्त हुआ हैं ।

३) आधुनिक नायिकाओं के स्वरूप पर पाश्चात्य संस्कृति और साहित्य का प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता हैं ।

४) आधुनिक नायिकाओं की समस्याएँ भी आधुनिक युग के अनुसार बदल चुकी हैं । नारी अब बन्दिनी नहीं हैं वह भी पुरुष के समान स्वतंत्र हैं । अर्थार्जन करनेवाली नायिकाएँ अपनी अलग प्रकार की समस्याओं को झेल रही हैं ।

५) आज नारी स्वतंत्र हैं पर वह पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं हैं । आज भी निर्धनता, कुरूपता, अशिक्षा, अंधविश्वास इतनाही नहीं सौन्दर्य भी आधुनिक नायिकाओं के लिए समस्या बन चुका हैं । साथ ही साथ विधवा-समस्या, पारिवारिक समस्या, विवाह-विच्छेद, विवाह विषयक तथा अवैध मातृत्व जैसी भयावह समस्याओं का उसे मुकाबला करना पडता है ।

## मुख्य आधारों पर

## आधुनिक नायिकाओं की श्रेणियाँ

- अ) गृहस्थ नायिकाएँ
  - १. सफल गृहस्थ नायिकाएँ
  - २. असफल गृहस्थ नायिकाएँ
- आ) प्रेमिकाएँ
  - १. सफल प्रेमिकाएँ
  - २. असफल प्रेमिकाएँ
- इ) अन्य नायिकाएँ
  - विधवा नायिकाएँ
  - परित्यक्ता नायिकाएँ
  - वेश्या नायिकाएँ
  - कुण्ठाग्रस्त नायिकाएँ
  - फैशनपरस्त नायिकाएँ
  - अर्थार्जन करनेवाली -- -- नायिकाएँ
  - विद्रोहिणी नायिकाएँ

## तथा

- उ) वासनात्मक
  - पत्नी, प्रेमिका, वेश्या
- ऊ) अवासनात्मक
  - माता-भगिनी, पुत्री, सास ।